Bill No. 165 of 2017

THE FINANCIAL RESOLUTION AND DEPOSIT INSURANCE BILL, 2017

A

BILL

to provide for the resolution of certain categories of financial service providers in distress; the deposit insurance to consumers of certain categories of financial services; designation of systemically important financial institutions;and establishment of a Resolution Corporation for protection of consumers of specified service providers and of public funds for ensuring the stability and resilience of the financial system and for matters connected therewith or incidental thereto.

गलत निदान, नुकसानदेह इलाज

फनिांशयिल रेजॉल्युशन एंड डपिॉजटि इंश्योरेंस (एफआरडीआई) बलि, 2017 की एक आलोचना

नवंबर 2017

All India Bank Officer's Confederation
National Alliance of People's Movements
New Trade Union Initiative
Centre for Financial Accountability

counterparty under the Payment and Settlement Systems Act, 2007 or a clearing corporation under section 8A of the Securities Contract Regulation Act, 1956; 51 of 2007. 42 of 1956.

(*7*) "co-operative bank" means—

गलत निदान, नुकसानदेह इलाज

फिनांशियल रेजॉल्युशन एंड डिपॉजिट इंश्योरेंस (एफआरडीआई) बिल, 2017 की एक आलोचना

परिचय

फिनांशियल रेजॉल्युशन एंड डिपॉजिट इंश्योरेंस (एफआरडीआई) बिल, 10 अगस्त 2017 को लोकसभा में वित्त राज्य मंत्री अर्जुन राम मेघवाल द्वारा पेश किया गया। इस विधेयक का घोषित मकसद यह है कि संकट का सामना कर रही वित्तीय क्षेत्र की इकाइयों को उबारने के लिए एक व्यापक फ्रेमवर्क मुहैया कराया जाए। जैसा ड्राफ्टिंग समिति की रिपोर्ट में परिभाषित किया गया है, इसका घोषित उद्देश्य है– 'वित्तीय व्यवस्था की स्थिरता और प्रतिरोधक्षमता में योगदान देना, एक तर्कसंगत सीमा तक उपभोक्ताओं की रक्षा करना और अधिकतम संभव सीमा तक सार्वजनिक कोष की रक्षा करना।' इसे इन्सॉल्वेन्सी एंड बैंकरप्सी कोड, 2016 के पूरक के रूप में काम करना है, जो गैर–वित्तीय संस्थाओं को उबारने का काम देखती है। एफआरडीआई अपने मौजूदा रूप में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों (पीएसबी) के कार्य के लिए गंभीर खतरा है।

2016–17 के अपने बजट भाषण में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों पर बोलते हुए केंद्रीय वित्त मंत्री अरुण जेटली ने कहा था, 'वित्तीय कंपनियों के समाधान से जुड़ा हुआ विधेयक संसद के मौजूदा बजट सत्र में पेश किया जाएगा। यह हमारी वित्तीय व्यवस्था की स्थिरता और प्रतिरोधक्षमता में योगदान देगा। यह विभिन्न वित्तीय संस्थानों के उपभोक्ताओं की रक्षा भी करेगा। इन्सॉल्वेन्सी एंड बैंकरप्सी कोड (आईबीसी) के साथ मिल कर वित्तीय कंपनियों के समाधान का तंत्र हमारे देश में समाधान तंत्र की व्यापकता को यकीनी बनाएगा।' इसके मुताबिक, 15 मार्च 2016 को वित्त मंत्रालय के अतिरिक्त सचिव अजय त्यागी की अध्यक्षता में एक ड्राफ्ट कोड बनाने के लिए एक समिति गठित की गई। 28 सितंबर तक ड्राफ्टिंग समिति की रिपोर्ट[1] और ड्राफ्ट विधेयक[2] दोनों ही आ चुके थे, जिस पर वित्त मंत्रालय ने सार्वजनिक राय[3] आमंत्रित की, जिसे 14 अक्तूबर तक जमा किया जाना था।

अगले साल, यह ऐलान[4] किया गया कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने फिनांशियल रेजॉल्युशन एंड डिपॉजिट इंश्योरेंस (एफआरडीआई) बिल 2017 को पेश करने की मंजूरी दे दी है। इसे मॉनसून सत्र में 10 अगस्त 2017 को पेश किया गया, जब सत्र खत्म होने में सिर्फ एक ही दिन बचा था, और इस तरह इस पर बहस की कोई गुंजाइश नहीं थी। विधेयक को पेश करने के इस

[1] http://dea.gov.in/sites/default/files/report_rc_sept21_1.pdf
[2] http://dea.gov.in/sites/default/files/FDI%20BILL-27092016_1.pdf
[3] http://pib.nic.in/newsite/mbErel.aspx?relid=151215
[4] http://pib.nic.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=165620

मनमाने तरीके का विपक्ष द्वारा विरोध किए जाने के बावजूद, विधेयक को पेश करने की इजाजत दे दी गई, जबकि अभी इसकी प्रतियां समय से सांसदों में बांटी भी नहीं गई थीं।

उसी दिन विधेयक को संयुक्त समिति को भेज दिया गया, जबकि अभी ढंग से इसे पढ़ा तक नहीं गया था और न ही इसके उसूलों और इरादों पर कोई बहस हुई थी। सांसदों ने इस बात पर सवाल उठाए कि संयुक्त समिति की जरूरत क्या है, जब वित्त मामलों पर एक स्थायी समिति पहले से ही मौजूद है जो इस विधेयक पर गौर करने में सक्षम है और जिसमें सभी राजनीतिक दलों का प्रतिनिधित्व है। यह आरोप लगाया गया कि दोनों सदनों में इस विधेयक को पास कराने के लिए ही सरकार स्थायी समिति से कतरा रही है, क्योंकि संयुक्त समिति की रिपोर्ट से संसद के दोनों सदन बंधे होंगे। ऐसा लगा कि या तो सरकार का कोई छुपा हुआ इरादा है या फिर वह इससे चिंतित थी कि विधेयक राज्य सभा में पास नहीं हो पाएगा, जहां सत्ताधारी दल के पास बहुमत नहीं है।

संयुक्त समिति के सदस्यों की एक सूची तालिका 1 में पेश की जा रही है।
तालिका 1ः फिनांशियल रेजॉल्युशन एंड डिपॉजिट इंश्योरेंस बिल, 2017 पर संयुक्त समिति के सदस्यों की सूची

लोकसभा सदस्य

1 श्री अनिल (उर्फ पद्माकर) गुलाबराव शिरोले . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
2 श्री सुभाष चंद्र बहेरिया . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
3 डॉ. किरीट सोमैया . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
4 श्री निशिकांत दूबे . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
5 श्री जयदेव गाल्ला . तेलुगु देशम पार्टी (डीडीपी)
6 श्री सौरव गोगोई . भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी)
7 डॉ. संजय जायसवाल . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
8 श्री पी. करुणाकरण . कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (मार्क्सिस्ट) (सीपीआई (एम))
9 श्री गजानन चंद्रकांत कीर्तिकर . शिव सेना (एसएस)
10 श्री भर्तृहरि महताब . बीजू जनता दल (बीजेडी)
11 श्री एस.पी. मुद्दहनुमेगौड़ा . भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी)
12 श्री जगदंबिका पाल . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
13 श्री चिराग पासवान . लोक जन शक्ति पार्टी (एलजेएसपी)
14 श्री कोंडा विश्वेश्वर राव . तेलंगाना राष्ट्र समिति (टीआरएस)
15 प्रो. सुगता रॉय . ऑल इंडिया तृणमूल कांग्रेस (एआईटीसी)
16 श्री गोपाल चिनय्या शेट्टी . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)

17 श्री अभिषेक सिंह . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
18 श्री शिवकुमार चनबसप्पा उदासी . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
19 डॉ. पोन्नुसमय वेणुगोपाल . ऑल इंडा अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कषगम (एआईएडीएमके)

खाली सीट 1

श्री गजेंद्र सिंह शेखावत ने 04.09.2017 को मंत्रपद पर अपनी नियुक्ति की वजह से संयुक्त समिति की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया।

राज्य सभा के सदस्य

1 श्री भूपेंद्र यादव . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
2 श्री आनंद शर्मा . भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी)
3 श्री नरेश गुजराल . शिरोमणि अकाली दल (एसएडी)
4 श्री भुबनेश्वर कालिता . भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी)
5 श्री सतीश चंद्र मिश्रा . बहुजन समाज पार्टी (बसपा)
6 श्री प्रफुल्ल चंद्र पटेल . राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (राकांपा)
7 श्री सुखेंदु शेखर रॉय . ऑल इंडिया तृणमूल कांग्रेस (एआईटीसी)
8 श्री अजय संचेती . भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)
9 श्री राम चंद्र प्रसाद सिंह . जनता दल (यूनाइटेड)
10 श्री रवि प्रकाश वर्मा . समाजवादी पार्टी

फिनांशियल रेजॉल्युशन एंड डिपॉजिट इंश्योरेंस बिल, 2017 पर संयुक्त समिति भूपेंद्र यादव (भाजपा) के नेतृत्व में 19 अगस्त 2017 को गठित की गई और इसे अगले सत्र के पहले हफ्ते की आखिरी तारीख तक अपनी रिपोर्ट सौंपने को कहा गया। इसने 8 सितंबर 2017 को विधेयक पर सार्वजनिक राय[5] आमंत्रित की, जिसे 29 सितंबर 2017 तक जमा किया जाना था। यहां यह कहने की जरूरत है कि पूरी प्रक्रिया बड़ी जल्दबाजी में संपन्न की गई और सार्थक सार्वजनिक बहसों को बढ़ावा देने के लिए पर्याप्त समय ही नहीं दिया गया।

यहां फिनांशियल रेजॉल्युशन एंड डिपॉजिट इंश्योरेंस (एफआरडीआई) बिल, 2017 की इस नजरिए के साथ एक आलोचना पेश की जा रही है, कि सार्वजनिक क्षेत्र की वित्तीय संस्थाओं (बैंकों, एनबीएफसी, बीमा कंपनियों वगैरह) पर इसका क्या असर पड़ेगा। ख्सुविधा के लिए हम यहां पर इन सभी के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक यानी पीएसबी का इस्तेमाल करेंगे,।

[5] http://pib.nic.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=170610

इस बिल के मुताबिक, एक संकटग्रस्त पीएसबी के मामले में, ये समाधान अपनाए जा सकते हैः

1. पीएसबी की परिसंपत्तियों और देनदारियों को किसी दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरित करके, जो ऐसी शर्तों के मुताबिक होगा जिस पर ऐसे व्यक्ति और रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन आपस में सहमत होंगे
2. एक अस्थायी–अल्पकालिक सेवा प्रदाता (ब्रिज सर्विस प्रोवाइडर) का निर्माण करके, ताकि वो उन परिसंपत्तियों को अपने हाथ में ले सके, जिनको फौरन साकार नहीं किया जा सकता
3. कर्जदाताओं और जमाकर्ताओं की पूंजी से 'बेल–इन' करके
4. दूसरी कंपनी में विलय या एकीकरण करके
5. अधिग्रहण (पीएसबी को पूरी तरह बेच कर), या,
6. परिसमापन (लिक्विडेशन) (बशर्ते नेशनल कंपनी लॉ ट्रिब्यूनल की मंजूरी हासिल हो)।

इसका मतलब यह है कि सार्वजनिक क्षेत्र के संकटग्रस्त बैंकों की परिसंपत्तियों और देनदारियों को निजी कंपनियों या एक अल्पकालिक सेवा प्रदाता को सौंपा जा सकता है, बेल–इन के प्रावधान के तहत जमाकर्ता अपनी जमा राशि से हाथ धो बैठेंगे और विलय या एकीकरण के नतीजे में सार्वजनिक बैंकों की संख्या में कमी आ सकती है या उनका निजीकरण हो सकता है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण को लेकर सरकार के मौजूदा रवैय्ये को देखते हुए इस बात के साफ संकेत मिलते हैं कि हवा का रुख क्या है।

एफआरडीआई, और साथ में आईबीसी, इसलिए बनाए गए कि पिछले कुछ दशकों में डूबे हुए कर्जों (एनपीए) और क्रेडिट में कमी के मामलों में भारी इजाफे से पीड़ित घरेलू बैंकिंग क्षेत्र में सुधार लाया जाए और उनमें फिर से जान डाली जा सके। इस बात में कोई दो राय नहीं है कि ये हालात सीधे सीधे कायदों को ताक पर रख कर दोस्ती निभाने (क्रोनिज्म) और अंधाधुंध कर्जे देने का नतीजा हैं, लेकिन एफआरडीआई, इसकी सजा पीड़ितों को ही देना चाहता है, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक जिनके हाथ राजनीतिक हस्तक्षेप की वजह से बंधे हुए हैं और छोटे जमाकर्ता शामिल हैं। वहीं यह अपराधियों को पूरी तरह आजाद छोड़ रहा है।

इस बिल से लोगों की जमा राशि की सुरक्षा और साथ ही कर्मचारियों और अधिकारियों की नौकरी की सुरक्षा और उनके वेतन पर जो प्रभाव पड़ेगा, वह बहुत साफ है। लेकिन एफआरडीआई का सबसे खतरनाक नतीजा यह निकलेगा कि यह सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के अस्तित्व के मुद्दे को सार्वजनिक बहसों के क्षेत्र से हटा कर इसे एक रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन के ऊपर छोड़ देगा और यह कार्यकारी संस्थान अपनी मर्जी से उनका भविष्य तय करेगा। इसका असर किसानों, छोटे, मंझोले और भूमिहीन खेतिहरों, सभी तबकों के शहरी कामगार लोगों, छोटे व्यापारियों और कारोबारियों, रोजगारशुदा और

बेरोजगार लोगों पर पड़ेगा। ये वे लोग हैं जो अपने पैसों की बचत के लिए और कर्जों के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों पर निर्भर हैं। इस कदम से उन्हें एक आर्थिक मंदी का सामना करना पड़ेगा। वित्त पूंजी की प्रधानता वाले एक डिजिटाइज्ड माहौल में ये लोग वित्तीय रूप से बेदखल हो जाएंगे।

1. बेहद ताकतवर 'रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन' की स्थापना

यह विधेयक एक रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन (आरसी) की स्थापना करेगा जैसा कि विधेयक के अध्याय 2 में इसका प्रावधान किया गया है। यह कॉरपोरेशन डिपॉजिट इंश्योरेंस एंड क्रेडिट गारंटी कॉरपोरेशन (डीआईसीजीसी) की जगह लेगा, जिसकी भूमिका जमा–राशि (डिपॉजिट) बीमा मुहैया कराने, वहनीयता (वायबिलिटी) के प्रति जोखिम के आधार पर बैंकों का श्रेणीकरण करने, विशिष्टिकृत सेवा प्रदाताओं (स्पेसिफाइड सर्विस प्रोवाइडर्स, एसएसपी) की मदद करने की है, जो एफआरडीआई के तहत वित्तीय सेवा प्रदाताओं के पूरे समूह को और अगर कोई होल्डिंग कंपनी हो तो उन्हें भी नियंत्रित करेगा और उन एसएसपी के लिए एक प्रशासक की भूमिका निभाएगा, जिन्हें 'गंभीर' होने की श्रेणी में डाला गया हो।

आरसी के बोर्ड के पास इसके अबाध अधिकार होंगे कि वो किसी भी एसएसपी के एकीकरण (यूनीफिकेशन), विलय (मर्जर), परिसमापन (लिक्विडेशन) और अधिग्रहण के आदेश जारी कर सके। इसमें स्टेट बैंक ऑफ इंडिया और दूसरे राष्ट्रीयकृत बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक और भुगतान बैंक, एलआईसी और जीआईसी समेत कोई भी बीमा कंपनी और गैर–बैंकीय वित्तीय संस्थान शामिल हैं, अगर इसकी राय में किसी संस्थान की वहनीयता का जोखिम फौरी या गंभीर स्तर पर हो। ऐसे में आरसी सर्वोच्च शक्तियों वाला एक संस्थान बन जाएगा, जो भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) और दूसरे नियामक संस्थानों के अधिकार क्षेत्र को अपने हाथों में ले लेगा।

ये वो तरीके हैं, जिनके जरिए आरसी अवांछित रूप से ताकतवर बन जाएगी–

- सेक्शन 42(2)(ब), 43(3)(इ)(पपप), 49(1)(प), 58(3)(ब) और 60(1) इसके प्रावधान करते हैं कि एक एसएसपी के संकट से निबटने की विभिन्न अवस्थाओं के तहत बोनस और वेतन देने से मना किया जा सकता है, सेवा स्थितियों में बदलाव लाए जा सकते हैं और कर्मचारियों को फौरन नौकरी से हटा दिया जा सकता है। ऐसे प्रावधान आरसी के हाथों में बिना किसी जवाबदेही के अत्यधिक अधिकार दे देते हैं। इसके अलावा, 58(3)(ब) के तहत, एक बार कॉरपोरेशन द्वारा वित्तीय संस्थान को अपने हाथों में ले लेने के बाद उसका कोई भी कर्मचारी अपनी बर्खास्तगी या नौकरी खोने के मामले में आरसी के फैसले पर सवाल नहीं उठा सकता। यह कर्मचारियों के अधिकारों का उल्लंघन है। इसका मतलब यह भी है कि कर्मचारियों की जिंदगी आरसी के रहमोकरम पर ही होगी और वे कानून के तहत इंसाफ हासिल करने का रास्ता नहीं अपना सकेंगे।

- भारत का संविधान, संवैधानिक उपचारों का अधिकार संबंधी अध्याय में, अनुच्छेद 32(4) के तहत कहता है, 'इस अनुच्छेद द्वारा जिन अधिकारों की गारंटी की गई है, उन्हें इस संविधान में दिए गए प्रावधानों के सिवा, निलंबित नहीं किया जा सकेगा।' लेकिन इस विधेयक में सेक्शन 65 और 133 के तहत एक ऐसा प्रावधान है जो संवैधानिक उपचारों पर पाबंदी लगाता है, जो यह साफ साफ कहता है कि किसी सेवा प्रदाता के परिसमापन की किसी भी कार्यवाही पर कोई भी अदालत या ट्रिब्यूनल गौर नहीं कर सकती, सिर्फ एक ऐसे ट्रिब्यूनल को छोड़ कर जो इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत काम करता हो (यानी नेशनल कंपनी लॉ ट्रिब्यूनल – एनसीएलटी)। सेक्शन 133 कहता है– 'इस अधिनियम में अगर इसके अलावा कुछ न कहा गया हो, तो किसी भी अदालत या किसी दूसरे ट्रिब्यूनल को ऐसे किसी भी मामले पर गौर करने और उस पर फैसला करने का अधिकार नहीं होगा जिस पर फैसला करने या जिसे निर्धारित करने का अधिकार इस अधिनियम के तहत सिर्फ कॉरपोरेशन, जो उचित नियामक है, ट्रिब्यूनल या अपीलीय ट्रिब्यूनल के पास ही है, और कोई भी अदालत या ट्रिब्यूनल ऐसी किसी प्रस्तावित कार्रवाई के संबंध में कोई भी हुक्म या निषेधाज्ञा जारी नहीं कर सकती और न ही ऐसी किसी कार्रवाई को पलट सकती है।'

- सेक्शन 36(5) के तहत, वहनीयता के प्रति जोखिम को मद्देनजर रखते हुए आरसी के पास सेवा प्रदाताओं को पांच श्रेणियों में रखने की शक्ति होगी – निम्न (लो), मध्यम (मॉडरेट), वास्तविक (मटेरियल), फौरी (इमीडिएट) और गंभीर (क्रिटिकल)। फिलहाल वित्तीय संस्थानों के जोखिम का आकलन करने का काम रिजर्व बैंक करता है। लेकिन यह बिल पूरी शक्ति आरसी को हस्तांतरित कर देगा और रिजर्व बैंक के पास सिर्फ सलाह देने की शक्ति ही बची रहेगी। इसके अलावा, सेक्शन 37 के तहत, कॉरपोरेशन के पास किसी एसएसपी को रिजर्व बैंक द्वारा दी गई वास्तविक (मटेरियल) जोखिम की श्रेणी को बदल देने की शक्ति भी होगी। व्यावहारिक रूप में, यह कॉरपोरेशन को इसके अधिकार देता है कि अगर यह चाहे तो यह किसी भी सेवा प्रदाता को अपने दायरे में खींच कर ला सकता है। यह कार्यपालिका के पास इसकी गुंजाइश छोड़ता है कि यह सार्वजनिक क्षेत्र के वित्तीय संस्थानों के खिलाफ भेदभाव कर सकती है।

- आरसी की संरचना पर सेक्शन 4 के मुताबिक, 11 बोर्ड सदस्यों में से 7 केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त किए जाएंगे। इसका मतलब है कि बोर्ड कार्यपालिका के प्रभाव में होगी और संसद की निगहबानी में नहीं रहेगी। इस तरह, संदिग्ध स्वायत्तता वाली एक आरसी अपनी कार्यपालिका के दल बल के साथ पूरी वित्तीय व्यवस्था को नियंत्रित करेगी।

- सेक्शन 10 इस बात को यकीनी बनाता है कि आरसी अपनी संरचना में खामियों और एक सदस्य की नियुक्ति में खामी या 'कार्यवाही की अनियमितता, जिसका असर मामले के मेरिट पर नहीं पड़ा

हो' के मामले में आरसी को जवाबदेह नहीं ठहराया जा सकता। इस तरह यह असल में पूरी वित्तीय व्यवस्था के नियमन को पूरी तरह से गैर–जवाबदेह बना देता है।

- आरसी के फैसलों और इसकी निगरानी की छानबीन को यकीनी बनाने के लिए कोई प्रावधान नहीं है।

- रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन से इसकी अपेक्षा है कि यह आरबीआई, सेबी, आईआरडीए और पीएफआरडीए द्वारा नियमित सभी इकाइयों को अपने नियंत्रण में लेगी।

- रिजर्व बैंक, सुधार करने के लिए फौरी कदम उठाने की अपनी कार्यप्रणाली (प्रॉम्प्ट करेक्टिव एक्शन फ्रेमवर्क) के तहत कुछेक कमजोर बैंकों के लिए पुनरस्थापन योजना शुरू कर चुका है और 'वास्तविक' वहनीयता जोखिम वाले बैकों में दखल देने की ताकत रखने वाली आरसी इसमें दखलंदाजी ही करेगी।

- सेवा प्रदाता बिना नियामक से संपर्क किए, सीधे आरसी को इसकी अर्जी दे सकते हैं कि वे अपनी मर्जी से अपना परिसमापन कराना (लिक्विडेशन) चाहते हैं।

- नियामकों के लिए, वर्गीकरण के आधार पर प्राप्त सूचनाओं और निरीक्षण के नतीजों को आरसी के साथ साझा करना जरूरी होगा, चाहे किसी सेवा प्रदाता की वहनीयता का जोखिम कुछ भी हो। यह नियामक को असल में महज एक डाकघर बना कर रख देगा।

- यह विधेयक एक सर्वोच्च प्राधिकार की रचना का प्रस्ताव देता है, जो भारतीय रिजर्व बैंक से भी अधिक ताकतवर होगा। यह प्राधिकार वित्त मंत्रालय के अधीन होगी, क्योंकि इसके अध्यक्ष और इसके ज्यादातर सदस्यों की नियुक्ति का अधिकार मंत्रालय के पास ही होगा। इसका मतलब है कि इस प्राधिकार की स्वतंत्रता सत्ताधारी दल के अधीन होगी।

जहां सरकार, रिजर्व बैंक और बैंकों के बोर्डों ने अंधाधुंध कर्जे देने और बाद में उनकी पुनर्संरचना में सक्रिय भूमिका अदा की है, तब क्या सरकार अब अपनी जिम्मेदारी से हाथ झाड़ सकती है जब ये कर्जे डूब गए हैं और वित्तीय सेक्टर के गंभीर संकट का सबब बने हुए हैं? ऐसे गंभीर संकट के दौर में भी सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में लोगों का भरोसा बना हुआ है क्योंकि वे सरकारी बैंक हैं और उनके साथ एक अंतर्निहित सॉवरेन गारंटी जुड़ी होती है। अगर सरकार इस विधेयक के जरिये अपनी और आरबीआई की जिम्मेदारी को एक रेजोल्यूशन कॉर्पोरेशन को सौंपेगी तो वो इस भरोसे को तोड़ेगी।

जब एक एसएसपी जोखिम के गंभीर स्तर पर होगा तो इसका प्रबंधन आरसी के पास चला जाएगा, क्योंकि आरसी पर ही उस एसएसपी को उबारने की जिम्मेदारी होगी। ऐसे में आरसी, एसएसपी की निगरानी नहीं करेगा बल्कि उसे नियंत्रित करेगा। यहां हितों में टकराव का सवाल पैदा होता है, क्योंकि एक ही व्यक्ति प्रशासक भी होगा और निगरानी करने वाला भी। लेकिन इसमें भी, यह सिर्फ एक मुद्दा है, क्योंकि निजीकरण के बहुत साफ रुझान मौजूद हैं और इसकी रोशनी में यह अंदाजा लगाना बहुत असंभव बात नहीं होगी कि किसी भी सार्वजनिक बैंक को आरसी के नियंत्रण में लाने के लिए उसको मनमाने तरीके से गंभीर श्रेणी में डाला जा सकेगा, ताकि उसका निजीकरण किया जा सके। भले यह निजीकरण एक साथ पूरा का पूरा हो या टुकड़ों—टुकड़ों में।

2. जमा राशि बीमा और डीआईसीजीसी का खात्मा

भारत में बैंकों में जमा सारी रकम, हरेक डिपॉजिट (जमा) के लिए डिपॉजिट इंश्योरेंस एंड क्रेडिट गारंटी कॉरपोरेशन एक्ट, 1961 (डीआईसीजीसी एक्ट) के तहत कुल एक लाख रुपए तक बीमित है। इस अधिनियम के जरिए बैंकों से अधिकतम 15 फीसदी प्रीमियम इकट्ठा करने के लिए एक निगम की स्थापना की गई थी, जो बदले में जमाकर्ताओं को इस बात का आश्वासन देता था कि बैंक के डूबने की स्थिति में कम से बीमित रकम को वापस पाने की गारंटी है।

अब डीआईसीजीसी को खत्म करते हुए, एफआरडीआई इस गारंटी को वापस ले रहा है और सेक्शन 22(2) और 29(1) के तहत प्रीमियम जमा करने और जमाकर्ता रकम को बीमित करने की डीआईसीजीसी की जिम्मेदारियां रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन को सौंप रहा है। डीआईसीजीसी पूरी तरह रिजर्व बैंक के मालिकाने वाली एक सहायक संस्था है, और बड़े कारगर तरीके से काम कर रही है। असल में, अपनी स्थापना के बाद से डीआईसीजीसी को सिर्फ 50.3 अरब रुपयों का ही भुगतान करना पड़ा, जबकि मार्च 2017 में इसके पास 701.5 अरब रुपए जमा बीमा कोष (डिपॉजिट इंश्योरेंस फंड) के रूप में मौजूद थे। इसके पास 716322 मिलियन रुपए निवेश के रूप में भी मौजूद हैं। मार्च 2017 में, जमा बीमा कोष में शेष रकम 645578.48 मिलियन रुपए थी और क्रेडिट गारंटी फंड में शेष रकम 730027.64 मिलियन रुपए। कुछेक सहकारी बैंकों को छोड़ कर, किसी भी बैंक को डीआईसीजीसी से दावे की जरूरत नहीं पड़ी। यह साफ—साफ दिखाता है कि हमारे देश में जमाकर्ता सुरक्षित हैं।

लेकिन, डीआईसीजीसी अधिनियम के उलट, जहां ये रकमें कानून में ही दर्ज की गई थीं, एफआरडीआई विधेयक में ऐसी कोई रकम तयशुदा नहीं है। एफआरडीआई के तहत, आरसी अपने नियमनों में भुगतान की जाने वाली प्रीमियम और बीमित रकम को स्पष्ट करेगी।

3. बेल—इन

सेक्शन 48(1)(ब) के मुताबिक, आरसी बेल–इन के जरिए किसी एसएसपी को उबारने का फैसला कर सकता है, जिसे वहनीयता के गंभीर जोखिम के बतौर श्रेणीबद्ध किया गया है। बेल–इन का मतलब एक ऐसी स्थिति है जहां बीमे से ऊपर की जमाकर्ता की रकम को इक्विटी में बदला जा सकता है और जमाकर्ताओं को बिना उनकी सहमति के शेयरधारक बनाया जा सकता है। इसका मतलब ये है कि राजनीतिक रूप से हेरफेर का शिकार बैंकों या उनके नाकारा या जानबूझ कर दिवालिया बनने वाले कर्जदारों को बचाने के व्यापक हित में मेहनतकश तबके के जमाकर्ताओं को इसका खामियाजा उठाना होगा और अपनी पसीने की कमाई की कुर्बानी देनी होगी। इस तरह बेल–इन की धारणा एक दोहरा झटका है। यह विधेयक लोगों से उनका यह अधिकार छीन रहा है कि वे सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में जमा अपनी रकम को वापस हासिल कर सकेंगे, जो उन्होंने पूरे भरोसे के साथ जमा की थी कि उनका पैसा सुरक्षित रहेगा। यह एक अहम सवाल खड़ा करता है कि जिस जमाकर्ता का किसी वित्तीय संस्थान के निवेश के फैसलों में कोई अधिकार नहीं है, उसे ऐसी अंधाधुंध उधारियों से होने वाले नुकसान का खामियाजा भुगतने को कैसे कहा जा सकता है?

सरकार जानती है कि डूबे हुए कर्जों की समस्या बड़े कॉरपोरेट कर्जदारों ने पैदा की है, जिसमें से कुछ तो जानबूझ कर दिवालिया बने हैं। तब तो यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस बिल के जरिए कर्जे चुकाने का बोझ कर्ज लेने वालों पर नहीं बल्कि जमाकर्ताओं पर डाला जा रहा है।

2008 के बाद आर्थिक मंदी की दशा में बड़े बैंकों को बचाने के लिए बैंकों में पैसे की आवाजाही (तरलता) को बनाए रखने के लिए अनेक प्रावधान किए गए थे और बेल–इन के विकल्प को तभी पेश किया गया था।

यह संकट हाल ही में साइप्रस में फूटा, जहां जमाकर्ता अपनी करीब 50 प्रतिशत बचत से हाथ धो बैठे, जब रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन ने 'बेल–इन' लागू किया, जो इस बिल के प्रस्तावों से मिलता जुलता है। मार्च 2013 में, साइप्रस की जनता को इसमें से चुनने को कहा गया कि 100,000 यूरो से अधिक के जमाकर्ता या तो अपनी रकम का 40 प्रतिशत गंवाएं (बैंक ऑफ साइप्रस) या 60 प्रतिशत (लाइकी बैंक)। बैंक तो बच गए, लेकिन जमाकर्ताओं से उनकी बचत छिन गई। उसी साल फरवरी में (बेल–इन लागू होने के एक महीना पहले) साइप्रस सरकार ने ऐलान किया था कि वह यूरोपीय संघ के साथ बेलआउट पर एक सहमति पर पहुंच गई है, और इसके बावजूद देश ने बेलआउट के बजाए बेल–इन को अपनाया। यहां तक कि बैंकों ने पैसा निकालने पर 100 यूरो की सीमा भी लगा दी थी।

4. हेयरकट

सेक्शन 44(1)() के मुताबिक, केंद्रीय काउंटरपार्टियों (एक कॉरपोरेट ईकाई जो एक कारोबार की पार्टियों की गारंटर के रूप में काम करती है) के संबंध में, जिसे एसएसपी की परिभाषा में शामिल कर लिया

गया है, उचित नियामक 'भागीदार की वजह से हुए असुरक्षित नुकसानों को वेरिएशन मार्जिन हेयरकटिंग के जरिए दिवालिया ठहरा सकता है।' सेक्शन 44(2) में, हेयरकट को परिभाषित करते हुए इसे 'कर्जदार द्वारा चुकाई जाने वाली रकम में से घटाया गया प्रतिशत' बताया गया है।

वित्तीय दुनिया की जबान में हेयरकट कुछ समय से चलन में है। यह और कुछ नहीं बल्कि कर्ज की रकम के एक हिस्से को डूबा हुआ बताने और माफ कर देने का ही दूसरा नाम है, जिसका मतलब यह है कि कर्ज लेने वाले को कुल कर्ज ली गई रकम का महज एक हिस्सा ही चुकाना होगा और बाकी का नुकसान कर्ज देने वाला उठाएगा। अगर बिल का उद्देश्य बैंकों को डूबे हुए कर्जों से निबटने में मदद करना है तो सरकार को बैंकों की बकाया रकम की उगाही के लिए कोशिश करनी चाहिए थी, न कि कर्जे को डूबा हुआ बता कर उसे एक तरह से माफ कर देना चाहिए। कर्ज को माफ करना कर्ज की उगाही नहीं होती और न ही यह नुकसानों की भरपाई कहा जा सकता है। कानून में बदलाव बहुत उम्मीदें नहीं जगाता, जब एक तरफ तो रिजर्व बैंक बैंकों को निर्देश दे रहा है कि कंपनियों के खिलाफ दिवालिया होने की कार्यवाही शुरू कराएं और दूसरी तरफ उन्हें इसका आदेश देता है कि वे परिसमापन (लिक्विडेशन) की स्थिति में डूबे हुए कर्जों के लिए 100 फीसदी का प्रावधान रखें! ऐसे प्रावधान और कुछ नहीं बल्कि गरीबों का पैसा चुरा कर अमीरों की झोली भरना है।

5. सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का विलय और बंदी

सेक्शन 48(1)(क) में यह बिल एक विशिष्टिकृत सेवा प्रदाता को उबारने के लिए विलय या एकीकरण के प्रावधान मुहैया कराता है।

1 अप्रैल 2017 को भारतीय स्टेट बैंक में इसके सहयोगी बैंकों के विलय को एक 'कामयाबी' ठहराया गया, जिसने एसबीआई को परिसंपत्तियों के मामले में शीर्ष के 50 वैश्विक बैंकों में पहुंचा दिया। इसने इसके उपभोक्ता आधार का विस्तार करते हुए इसे 37 करोड़ तक पहुंचा दिया, और इसका जमा आधार (डिपॉजिट बेस) 26 लाख करोड़ हो गया। लेकिन वित्त वर्ष 2018 के पहले तिमाही नतीजों[6] में एसबीआई समूह का परिचालन लाभ 13.72 प्रतिशत गिर कर 2017 की पहली तिमाही के 13,762 करोड़ से 2018 की इसी अवधि में 11,874 करोड़ रह गया। इस बात के उजागर होने के बावजूद, जो इस दलील को गलत ठहराती है कि विलय बैंकों के कामकाज को बेहतर बनाएगा, सरकार और भी विलयों पर अड़ी हुई है, जबकि रेटिंग एजेंसियों[7] तक ने डूबे हुए कर्जों (एनपीए) से निबटने में इसकी कारगरता पर संदेह जाहिर किया है।

[6] https://www.sbi.co.in/portal/documents/44589/101996501/Press+Release+Q1FY18/19bd6486-72f7-41cc-8b38-b80d22e2af8d

[7] https://www.bloombergquint.com/business/2017/06/08/consolidation-not-the-answer-to-banking-sector-stress-say-moodys-and-icra

इस शिकस्त के बाद वित्त मंत्री ने हाल ही में कहा कि सरकार अब मजबूत बैंकों का ही आपस में विलय करेगी न कि मजबूत बैंकों का कमजोर बैंकों के साथ। बैंकों का विलय सिर्फ पूंजी के एक जगह पर जमा होने यानी इसके संक्रेंद्रण को ही बढ़ावा देगा और देश के सामान्य नागरिकों को इससे कोई लाभ नहीं होगा। विलय का मतलब यह भी है बैंकों की ऐसी शाखाओं की तादाद में कमी आएगी, जहां उपभोक्ता निजी तौर पर जाकर काम अपना करा सकते हैं। यह देश के लिए बेहद नुकसानदेह होगा, जो विकासशील और विकसित देशों की तुलना में अभी भी बैंकों की पहुंच की व्यापकता के मामले में बहुत पीछे है। इस तरह भारत को बैंकों के विस्तार की जरूरत है न कि इसको समेटने की! बैंकों को बंद करने के नतीजे में कर्मचारियों में भी कटौती होगी।

आज बैंकिंग व्यवस्था में आमूल–चूल बदलाव लाने के लिए बैंक संकट को एक मौके के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। छोटे बैंकों को आपस में मिला कर कुछेक 'बड़े कर्जदाता' बैंकों का निर्माण और साथ ही पेमेंट बैकों की शुरुआत, जिनमें से ज्यादातर निजी हाथों में हैं, ऐसी बैंकिंग व्यवस्था का अंत करने का सबसे कारगर उपाय है, जिसमें शाखाओं में ग्राहक और उपभोक्ता निजी तौर पर जाकर सेवाओं का लाभ उठाते हैं।

विलय के अलावा, बिल में एसबीआई एक्ट जैसे विभिन्न कानूनों में संशोधन के प्रस्ताव भी हैं, ताकि एसबीआई, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सार्वजनिक क्षेत्र के दूसरे बैंकों और सहकारी बैंकों की बंदी (लिक्विडेशन) के लिए प्रावधान लाए जा सकें। कानून बनाने वाला देश का सर्वोच्च प्राधिकार होने के नाते संसद में पास होने वाले किसी भी अधिनियम को, जनता के मन में भरोसा जगाना चाहिए। हमारे देश में 80 प्रतिशत से ज्यादा जमाकर्ता पारिवारिक जमाकर्ताओं के रूप में वर्गीकृत हैं, जिनके पास छोटी बचत होती है जिसे वे बैंकों में पूरे भरोसे के साथ जमा करते हैं कि सरकार उनके भुगतान को यकीनी बनाएगी। लेकिन इस अधिनियम ने एसबीआई और साथ ही सार्वजनिक क्षेत्र के दूसरे बैंकों को अपने दायरे में ला दिया है और इन बैंकों के परिसमापन (लिक्विडेशन) के लिए प्रावधान पेश किया है। यह जमाकर्ताओं में असुरक्षा को जन्म देगा। हर किसी को यह याद करना चाहिए कि संयुक्त राज्य में 2008 के वित्तीय संकट के बावजूद, जो यूरोप और दुनिया के ज्यादातर हिस्सों में फैल गया था, भारतीय बैंकों में अफरा–तफरी नहीं मची थी, जिसकी वजह यह भरोसा ही था। अगर यह भरोसा टूट गया तो यह वित्तीय सेक्टर में एक छोटे से संकट के मामले में भी अफरा–तफरी को अंजाम दे सकता है। लोग अपनी बचत को बैंकों में रखना पसंद नहीं करेंगे क्योंकि वो बेल–इन या परिसमापन की हालत में उससे हाथ धो सकते हैं।

6. व्यवस्थागत रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थान (सिस्टेमिकली इम्पॉर्टेंट फिनांशियल इंस्टीट्यूशंस (सिफि))

सेक्शन 25 के तहत यह निर्धारित करने का अधिकार खास तौर से केंद्र सरकार को है कि सिफि क्या है।

एफआरडीआई के पहले रिजर्व बैंक ने भारतीय स्टेट बैंक, आईसीआईसीआई बैंक और एचडीएफसी बैंक की पहचान व्यवस्थागत रूप से महत्वपूर्ण घरेलू बैंकों (डोमेस्टिक सिस्टेमिकली इम्पॉर्टेंट बैंक्स, डीएसआईबी) के रूप में की थी। अब जो नई बात है वो ये है कि बिल का सेक्शन 25(1) कहता हैः 'कोई भी व्यक्ति जिसे रिजर्व बैंक द्वारा डोमेस्टिक सिस्टेमिकली इम्पॉर्टेंट बैंक का दर्जा दिया गया है उसे इस अधिनियम के उद्देश्य के लिए छह महीने की अवधि के लिए सिस्टेमिकली इम्पॉर्टेंट फिनांशियल इंस्टीट्यूशन मान लिया जाएगा, जिस अवधि को केंद्र सरकार एक नोटिफिकेशन के जरिए तय करेगी।' इसके अलावा, सेक्शन 26(2) और 38(2) 'निम्न' या 'मध्यम' जोखिम वाले संस्थानों के रूप में वर्गीकृत सभी सिफि संस्थानों को इस तरह लेता है मानो वे स्थायी रूप से 'वास्तविक' और 'फौरी' जोखिम के स्तरों पर हों। इन प्रावधानों को अगर एक साथ मिला कर देखा जाए तो यह कार्यपालिका को किसी भी वित्तीय संस्थान पर नियंत्रण की क्षमता दे देता है। ऐसा करने से न सिर्फ फैसले लेने और कदम उठाने की प्रक्रिया में देरी होगी, बल्कि सिफि संस्थानों की स्वायत्तता में जो कमी है उसको भी यह बढ़ा देगा और उनके आगे के विकास में बाधक बनेगा।

7. एक अस्थायी–अल्पकालिक सेवा प्रदाता (ब्रिज सर्विस प्रोवाइडर)

बिल में ब्रिज सेवा प्रदाताओं की स्थापना का प्रावधान है। ये रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन के पूरे मालिकाने वाले सहायक संस्थान होंगे, जिनके सदस्यों की नियुक्त की जाएगी। सेक्शन 50(1) के मुताबिक, 'कंपनीज एक्ट, 2013 के प्रावधानों के तहत कॉरपोरेशन एक कंपनी का समावेश करते हुए एक ब्रिज सेवा प्रदाता का निर्माण कर सकता है।' और सेक्शन 50(4) कहता है कि 'ब्रिज सेवा प्रदाता का कम से कम तीन निदेशकों का एक निदेशक मंडल होगा, जिनकी संख्या दस से अधिक नहीं होगी और जिन्हें कॉरपोरेशन नियुक्त करेगा।' लेकिन इसका कोई जिक्र नहीं है कि जिन व्यक्तियों की नियुक्ति होगी उनकी प्रकृति क्या होगी और इसके लिए चुने जाने के लिए कंपनी की पात्रता क्या होगी। इसलिए ब्रिज सेवा प्रदाता के प्रबंधन की प्रकृति को लेकर अस्पष्टता है।

ब्रिज सेवा प्रदाता का उद्देश्य उन परिसंपत्तियों और देनदारियों के आश्रय (रिपॉजिटरी) के रूप में काम करना है, जिनको फौरी तौर पर साकार नहीं किया जा सकता और इस संबंध में महत्वपूर्ण कार्यों को जारी रखना है।

एक ब्रिज सेवा प्रदाता के लिए एक तयशुदा मुद्दत एक साल की है (जिसे एक और साल तक बढ़ाया जा सकता है) लेकिन क्या यह समय पर्याप्त है? इससे बैंक किसी टिकाऊ समाधान तक पहुंचने के बजाए सिर्फ परिसमापन के लिए ही मजबूर होंगे।

8. न्यायपालिका को बाहर रखना

सेक्शन 65(1) कहता है, 'सामयिक तौर पर लागू किसी अन्य कानून के किसी नुक्ते के बावजूद, एक विशिष्टीकृत सेवा प्रदाता के परिसमापन के लिए कार्यवाही पर किसी भी अदालत या ट्रिब्यूनल में गौर नहीं किया जाएगा, सिवाय इस अधिनियम के प्रावधानों के मुताबिक बने ट्रिब्यूनल के।' सेक्शन 133, एक सेवा प्रदाता की बंदी के लिए किसी भी कार्यवाही में दखल देने से अदालतों और ट्रिब्यूनलों को रोकते हुए संवैधानिक उपचारों पर भी रोक लगा देता है। इस विधेयक के मुताबिक कॉरपोरेशन बिना किसी अवरोध या कानून के डर के काम कर सकता है और अकेली अपीलीय संस्था नेशनल कंपनी लॉ ट्रिब्यूनल (एनसीएलटी) है, जिसके कर्मचारियों की संख्या बेहद कम है, इसके पास सिर्फ 11 पीठ (बेंच), 16 न्यायिक सदस्य और सात तकनीशियन हैं।

इसी से मिलती–जुलती पाबंदी उन कर्मचारियों पर भी थोपी गई है जिन्हें इस अधिनियम के तहत नौकरी से निकाल दिया जाएगा। वे किसी भी तरह की न्यायिक राहत नहीं पा सकेंगे। विधेयक में एक ऐसा प्रावधान रखना न्यायपालिका पर तो पाबंदी लगाएगा ही, जनता के अधिकारों में भी कटौती करेगा, जो इस प्रावधान को असंवैधानिक बना देता है।

9. द फिनांशियल स्टेबिलिटी बोर्ड के वित्तीय सुधारों की मुख्य खासियतें

2008 की वित्तीय मंदी वित्त पूंजी पर एक तगड़ी चोट थी, जब इसका मॉडल बाजार की तबाही में लड़खड़ा गया, जिसके बारे में दावा किया जाता था कि वह इतना बड़ा मॉडल है कि नाकाम ही नहीं हो सकता। बाजार के कायदों पर चलते हुए जो राज्य आर्थिक काम–काज से बाहर जा चुका था, उसे अनेक बैंकों और कॉरपोरेशनों को उबारने के लिए दखल देना पड़ा। वैश्विक अर्थव्यवस्था अभी भी 2008 के भूत से सहमी हुई है। इस तरह साल 2008 हालिया वित्तीय इतिहास की एक खास निशानी बन गया है, जो वित्तीय पूंजी को बचाने के लिए नए और खोजपूर्ण विचारों को जन्म दे रहा है।

द फिनांशियल स्टेबिलिटी बोर्ड, 2009 (एफएसबी) की स्थापना वैश्विक मंदी की तबाही के बाद जी7 देशों द्वारा की गई (बल्कि इसे फिनांशियल स्टेबिलिटी फोरम (1999) के इसके पुराने अवतार से उठा लिया गया)। इसका प्राथमिक मकसद बड़ी कॉरपोरेट कंपनियों और बैंकों की स्थिरता को सुनिश्चित करना था। इस तरह एफएसबी समाधानों की एक व्यवस्था को लेकर आया। नवंबर 2011 में वित्तीय समाधान (फिनांशियल रेजॉल्युशन) के लिए 'की एट्रिब्यूट्स ऑफ इफेक्टिव रेजॉल्युशन रेजीम्स ऑफ फिनांशियल इंस्टीट्यूशंस' नाम की एक रिपोर्ट को समाधानों की व्यवस्था के लिए नए अंतरराष्ट्रीय मानकों के रूप में जी20 के राष्ट्राध्यक्षों द्वारा अपनाया गया। इसे अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष का समर्थन हासिल था। एफएसबी और आईएमएफ को सदस्य देशों की परस्पर समीक्षा (पीयर रिव्यू) के जरिए अलग–अलग और साथ

मिल कर इन नीतियों के लागू होने की प्रगति का जायजा लेना था और जी20 देशों को इसकी प्रगति की जानकारी देनी थी।

द रेजॉल्युशन अथॉरिटी (जैसा कि इस रिपोर्ट में लिखा गया है) वह संस्थान है जो इस वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित बनेगी। इसमें अतिसरलीकरण बता कर खारिज कर दिए जाने का जोखिम तो है, लेकिन इस रेजॉल्युशन अथॉरिटी के उद्देश्य को समझने का सबसे आसान तरीका यह है कि जब बाजार फिर से डूबें तो आड़े वक्त के लिए वित्तीय संस्थानों के पास हर समय पैसा रहे।

एफआरडीआई बिल असल में एफसीबी की इस रिपोर्ट से ही जन्मा है। बल्कि रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन के साथ साथ इस विधेयक के अनेक हिस्सों में इस रिपोर्ट के मॉडल और इसकी दूसरी सिफारिशों को जस का तस उठा लिया गया है और भारतीय हालात की विशिष्टताओं का कोई खयाल रखा गया है। इसमें शामिल हैं बेल–इन, ब्रिज सेवा प्रदाता, हेयरकट, रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन और इसकी विशेषाधिकारों वाली सर्वोच्च शक्ति, जिन्हें रिपोर्ट से उठा लिया गया है। विधेयक के कुछ हिस्से तो अक्तूबर 2014 में प्रकाशित दस्तावेज 'की एट्रिब्यूट्स ऑफ इफेक्टिव रेजॉल्युशन रेजीम्स ऑफ फिनांशियल इंस्टीट्यूशंस' से हर्फ ब हर्फ ले लिए गए हैं। रिजर्व बैंक की 'फिनांशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट दिसंबर 2016' के सेक्शन 3.25 में इसका जिक्र है कि 'भारत द्वारा फिनांशियल स्टेबिलिटी बोर्ड के की एट्रीब्यूट्स (एफएसबी–केएज) ऑफ इफेक्टिव रेजॉल्युशन रेजीम्स फॉर फिनांशियल इंस्टीट्यूशंस पर अमल करने में रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन की स्थापना मददगार होगी।' यह सब देश की जनता का बिना कोई खयाल किए ही अमल में लाया जा रहा है, जो बेल–इन जैसे समाधान के उपायों को अगर अपनाया गया तो अपनी बचत से ही हाथ धो बैठेगी।

इन सबके उलट, भारत बाजार के धराशायी होने के प्रभावों से अगर अपेक्षित रूप से बच पाया था तो इसलिए कि दूसरे कारणों के अलावा भारतीय बैंक मुख्यतः जमा–राशि आधारित संस्थान थे। भारतीय अर्थव्यवस्था बच पाई क्योंकि इसके पास राज्य द्वारा चलाए जा रहे वित्तीय संस्थान (सार्वजनिक बैंक) थे। भारतीय अर्थव्यवस्था और इसके संस्थान पश्चिमी अर्थव्यवस्था और संस्थानों से बहुत अलग हैं। ऐसी एक स्थिति में सरकार के लिए, बिना भारतीय यथार्थ पर विचार किए इस रिपोर्ट को स्वीकार करने और इसे अमल में लाने की कोई वजह नहीं है। आर्थिक मामलों के विभाग के अतिरिक्त सचिव, श्री अजय त्यागी की अध्यक्षता वाली समिति ने सिर्फ एफसीबी की सिफारिशों की नकल की है और भारतीय वित्तीय सेक्टर के जायजे पर गौर नहीं किया है। इसलिए ये सिफारिशें व्यावहारिक नहीं है और हमारे देश के अनुकूल नहीं हैं।

हम भारत के सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की तुलना पश्चिमी देशों के बैंकों से नहीं कर सकते। 2008 और 2012 के बीच वित्तीय मंदी के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका में 465 बैंक डूब गए क्योंकि वे निजी बैंक थे। उनमें से अनेक छोटे थे और कुछ बड़े थे। कुछ रेहन के कारोबार जैसे 'मॉरगेज बैंकों' जैसे विशेष

क्षेत्रों में ही काम कर रहे थे। दूसरी तरफ 1969 के बाद के भारत में सरकारी गारंटी की वजह से कोई भी बैंक नहीं डूबा है।

10. एफआरडीआई के जरिए निजीकरण की राह

भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम में एक प्रावधान है कि एसबीआई को कभी बंद नहीं किया जा सकेगा, जबकि यह अधिनियम विभिन्न अधिनियमों में संशोधनों को प्रस्तावित करता है, जिसमें एसबीआई अधिनियम भी शामिल है और एसबीआई, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी बैंकों के परिसमापन के प्रावधान बनाता है। इसके साथ–साथ, ऐसा लगता है कि बंद किए जाने के बजाए ये बैंक निजी हाथों में सौंप दिए जाएंगे। बैंकों का राष्ट्रीयकरण ही इसीलिए हुआ था कि निजी क्षेत्र कुप्रबंधन का शिकार था। राष्ट्रीयकरण के बाद से बैंकों ने अर्थव्यवस्था के विकास में एक मुख्य भूमिका अदा की है। अब भी, अर्थव्यवस्था के उबरने में बैंकों को एक प्रमुख भूमिका निभानी है। ऐसे नाजुक दौर में इस विधेयक को पास करना अर्थव्यवस्था को और बदहाली की ही तरफ ले जाएगा।

निष्कर्ष

इन विशिष्टताओं वाले इस विधेयक में देश के वित्तीय परिदृश्य को बदल देने की क्षमता है। इसके बावजूद, इसका ड्राफ्ट लिखे जाते वक्त भारतीय वित्त व्यवस्था के साथ कोई गंभीर संवाद नहीं किया गया। विधेयक, समाधान की मौजूदा व्यवस्था को मजबूत करने के बजाए उन्हें नकारता है और इसने एफसीबी की सिफारिशों को ही आंख मूंद कर अपनाया है। एक ऐसे हालात में, जब सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक पहले से ही नाकारा परिसंपत्तियों या डूबे हुए कर्जों (एनपीए) के संकट का सामना कर रही हैं, सरकार को वित्तीय संस्थानों की मदद करने के इरादे से पूंजी जुटाने और कर्ज दी हुई रकम की उगाही पर ध्यान देना चाहिए। इसके बजाए, यह विधेयक संस्थानों के ही पुर्जे–पुर्जे कर देता है और देश की जनता को संकट में डालता है।

विचारों को आमंत्रित करते हुए समिति ने 'सभी हिस्सेदारों' का जिक्र किया है। सबसे बड़े हिस्सेदार मेहनतकश और सेवानिवृत्त लोग हैं, जिन्होंने बैंकों में अपनी जमा पूंजी और बचत जमा कर रखी है और उनमें से बहुत बड़ी संख्या में लोग इस बात से अनजान हैं कि उनके हित खतरे में हैं।

यह जानकारी आम है कि 89 फीसदी डूबे हुए कर्जों के लिए बड़ी कॉरपोरेट कंपनियां जिम्मेदार हैं। वृद्धि में मंदी और हाल में अनेक महत्वपूर्ण सेक्टरों में ठहराव को देखते हुए, यह स्थिति तो आनी ही थी। ऐसे हालात के बावजूद, सरकार ने जानबूझ कर दिवालिया बनने वालों के खिलाफ कोई कदम नहीं उठाया। यहां तक कि सर्वोच्च न्यायालय ने भी अपने फैसले में कहा कि जानबूझ कर दिवालिया बनने वाले ऐसे लोगों के नामों को प्रकाशित किया जाए। जानबूझ कर दिवालिया बनने वालों के नाम प्रकाशित करना

और उन्हें जवाबदेह ठहराना निश्चित रूप से बैंकों को बंद करने और देश के लाखों लोगों की जमा रकमों का बेल–इन करने से कहीं कम दुश्वार काम है।

भारत सरकार के महज 5 करोड़ रुपए के निवेश से शुरू हुआ भारतीय जीवन बीमा निगम (एलआईसी) आज विकसित होकर एक भव्य संस्थान में तब्दील हो गया है जिसका बीमा पॉलिसियां अदा करने का एक बेहतरीन रेकॉर्ड है और एलाईसी लाभांशों (डिविडेंड) के जरिए देश के सालाना बजट में भारी रकम भी जोड़ता है। एलआईसी सरकारी दिशानिर्देशों के मुताबिक, अधिकतर बैंकों में और वित्तीय संस्थानों में एक साझेदार (शेयरहोल्डर) भी है। विधेयक के पास हो जाने के बाद एलआईसी और जेनेरल इंश्योरेंस कॉरपोरेशन (जीआईसी) ऑफ इंडिया जैसे भव्य संस्थान भी रेजॉल्युशन कॉरपोरेशन के जरिए समाधानों के दायरे में आ जाएंगे। इसके अलावा, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिनकी ग्रामीण इलाकों में व्यापक पहुंच है, और सहकारी बैंक भी, जो देश के ग्रामीण और दूर–दराज के इलाकों की सेवा करते हैं, आसानी से बंद किए जा सकेंगे। राज्य सरकारें और नाबार्ड उनसे सहयोग करते हैं, क्योंकि वे बेहद दूर–दराज के खेतिहरों और गरीबों को जरूरी कर्जे मुहैया कराते हैं। इसलिए, यह विधेयक राज्य सरकारों के अधिकारों का भी हनन करता है। अगर यह जनता पर हमला नहीं है तो क्या है, खास कर उन लोगों पर जो अपने अस्तित्व और गुजर–बसर के लिए राज्य पर निर्भर हैं?

जब सरकार, रिजर्व बैंक, बैंकों के बोर्डों ने आंख मूंद कर कर्जे बांटने में सक्रिय भूमिका निभाई है तो अब सरकार अपनी जिम्मेदारी से पल्ला नहीं झाड़ सकती। ऐसे गंभीर संकट में भी सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों पर लोगों का भरोसा बना रहा है, क्योंकि वे सरकारी बैंक हैं और वे देश के केंद्रीय बैंक द्वारा नियमित होते हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। अगर इस विधेयक के जरिए सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को पुर्नव्यवस्थित कर दिया और भारतीय अर्थव्यवस्था में उनकी भूमिकाओं को पुनर्परिभाषित कर दिया (और इस तरह उनकी भूमिका को घटा दिया), और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के इस संकट में योगदान देने वाले नीतिगत कदमों (पॉलिसी मेजर्स) या उनके अभाव को तथा अर्थव्यवस्था की जरूरतों को संबोधित नहीं किया, तो सरकार आर्थिक संकट को और गहरा ही बनाएगी। यह जनता के भरोसे को तोड़ने जैसा होगा।

विधेयक से जुड़े कुछ सवाल

इस बिल के खिलाफ जो अभियान चला उसका नतीजा ये हुआ कि मीडिया, राजनीतिक पार्टियाँ और आम जनता ने इस बिल पर कई सवाल खड़े करना शुरू कर दिया। हालांकि इससे जुड़ी अधिकतर आलोचना बेल–इन उपनियम तक सीमित रही, पर उसने जिस तरह का हंगामा खड़ा किया उससे वित्त मंत्रालय और यहाँ तक कि प्रधानमंत्री भी लोगों को जवाब देने पर मजबूर हो गये। एफआरडीआई पर संयुक्त संसदीय समिति ने विधेयक पर और काम करने के लिए समय माँगा है। इस विधेयक को इस बार के बजट सत्र में प्रस्तुत किया जायेगा।

इसी दौरान कई सारे समाचार–पत्रों द्वारा इस विधेयक का समर्थन करने के लिये जनता के बीच में गलत खबर और अफवाह फैलाई जा रही है। इससे जुड़े कुछ सवालों का यहाँ उत्तर दिया गया है:

1. क्या ये सच है कि बीमाकृत राशि को एक लाख के ऊपर बढाया जायेगा ?

डिपाजिट इंश्योरेंस एंड क्रेडिट गारंटी कॉर्पोरेशन एक्ट, 1961 (डीआईसीजीसी एक्ट) के तहत अधिकतम बीमाकृत राशि एक लाख रुपये है। एफआरडीआई विधेयक इस अधिकतम राशि को और नहीं बढ़ाता है। वित्त मंत्री ने अपने बयानों में ये कहा है कि एफआरडीआई विधेयक में बीमाकृत राशि बढ़ाने के प्रावधान होंगे, पर मौजूदा विधेयक में ऐसे कोई प्रावधान नहीं है।

2. क्या ये सच है कि बेल–इन को सरकारी बैंकों के लिए नहीं इस्तेमाल किया जायेगा?

एफआरडीआई विधेयक के अंतर्गत सारे वित्तीय संस्थान आते हैं, जिसमें सरकारी बैंक भी शामिल हैं। इस विधेयक में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो सरकारी बैंकों को बेल–इन उपनियम के अन्दर आने से छूट देता हो। कुछ समाचार–पत्रों ने ऐसे प्रावधान का जिक्र किया है पर अभी तक विधेयक में ऐसे कोई बदलाव नहीं हुए हैं।

3. मीडिया में कुछ खबरें आई हैं कि कुछ ग्राहक बेल–इन उपनियम लागू हो जाने के डर से अपनी जमा–राशि बैंकों से निकाल रहे हैं। ऐसे डर को दूर किये जाने के लिये क्या करना चाहिए?

बैंक–ग्राहकों को ये सूचित किया जाना जरूरी है कि उनके जमा–राशि को तत्काल कोई खतरा नहीं है क्योंकि संसदीय समिति अभी भी एफआरडीआई विधेयक पर विचार कर रही है। पर बैंक–ग्राहकों से ये आग्रह किया जाता है कि वो मौजूदा रूप में एफआरडीआई विधेयक का विरोध करने में समर्थन प्रदान करें।

4. बैंक यूनियनों की एक आलोचना है कि वो सरकार के हर नए प्रस्ताव का विरोध करते हैं। क्या ऐसा सच है?

बैंक कर्मचारियों ने सरकार के हर फैसले का समर्थन किया है और सहयोग प्रदान किया है जिससे लोगों को मदद पहुंचे। सरकार की नीतियों को लागू करने में ये बैंक कर्मचारी ही रहे हैं जिन्होंने जी–तोड़ मेहनत की है। नोटबंदी के दौरान भी ये बैंक कर्मचारी ही थे जिन्होंने बिना किसी पारिश्रमिक के अपने नियत समय से ज्यादा काम किया था। पर जब भी इस देश के लोगों के हित के विरोध में कोई नीति लाई गयी है, तब बैंक यूनियनों ने उन नीतियों का विरोध किया है और वो आगे भी ऐसा करते रहेंगे।

5. क्या ये सच है कि सरकारी बैंकों का परिसमापन (लिक्विडेशन) नहीं हो सकता है ?

एफआरडीआई विधेयक के अनुसार, किसी भी संस्थान कि स्थिति वहनीयता के गंभीर जोखिम के श्रेणी में चली गयी हो और जिसके नाम पर परिसमापन का आदेश जारी हो गया हो, उसे रेजोल्यूशन कॉर्पोरेशन द्वारा परिसमापित किया जा सकता है। वित्त मंत्रालय के 7 दिसम्बर 2017 के एक प्रेस विज्ञप्ति में ये कहा गया था कि सरकार की अन्तर्निहित गारंटी पर इसका असर नहीं पड़ेगा। पर ये विधेयक सरकारी बैंकों को परिसमापन के खतरे से छूट नहीं देता है।

6. क्या ये सच है कि सहकारी बैंकों को एफआरडीआई विधेयक लागू होने से कहीं बड़ा खतरा है ?

हाँ, भारत में सहकारी बैंक एक कमजोर स्थिति में हैं। ये एक संभावना है कि एफआरडीआई विधेयक के वर्गीकरण के अनुसार कई सारे सहकारी बैंक वहनीयता के गंभीर जोखिम के श्रेणी में शामिल हो जायेंगे, जिससे उनके समाधान (रेजोल्यूशन) का रास्ता खुल जायेगा।

सहकारी बैंक और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक गरीबों को दूर–दराज के इलाकों में सेवाएं प्रदान करते है और वो राज्य सरकारों और नाबार्ड द्वारा शासित होते हैं।

7. किसी वित्तीय संस्थान के अफसर और कर्मचारी इस विधेयक से किस तरह से प्रभावित होंगे ?

जब रेजोल्यूशन कॉर्पोरेशन किसी वित्तीय संस्थान की जांच कर रहा होगा, तब कॉर्पोरेशन किसी भी अफसर या कर्मचारी को निलंबित कर सकता है, उनके पारिश्रमिक पर रोक लगा सकता है या उन्हें बर्खास्त कर सकता है। विधेयक के प्रावधानों के अनुसार सम्बंधित अफसर या कर्मचारी रेजोल्यूशन कॉर्पोरेशन के निर्णय पर सवाल या उसके खिलाफ अपील नहीं कर सकता है।

8. इस स्थिति में जमा–राशि कहाँ पर सुरक्षित है ? पोस्ट ऑफिस, म्यूच्यूअल फण्ड या किसी और वित्तीय संस्थान में ?

एफआरडीआई विधेयक के दायरे में सभी तरह के वित्तीय संस्थान आते है।

9. इस समस्या से बाहर आने का क्या तरीका है ?

एफआरडीआई विधेयक के खिलाफ जो अभियान चल रहा है उससे जुड़ें। www.repealfrdi.net वेबसाइट पर जाएँ और अपने सांसद को लिखें कि वो इस विधेयक के विरोध में वोट करें। सरकार जो वित्त और वित्तीय संस्थानों से जुड़े जो बदलाव ला रही है, उसके बारे में जागरूक रहें। सरकारी बैंकों के निजीकरण के विरोध कि लड़ाई में जुड़े।

For Copies:

सेन्टर फ़ॉर फ़ाइनैन्शियल अकाउन्टेबिलिटी

R-21, साउथ एक्सटेंशन पार्ट-2, नई दिल्ली 110049

फोनः +91-11-49123696

ईमेलः info@cenfa.org वेबसाइट: www.cenfa.org